इकाई 35 भारतीय संविधान का निर्माण*

इकाई की रूपरेखा

35.1 प्रस्तावना

35.2 भारत के संविधान का विकास 1858-1935

35.3 संविधान सभा का निर्माण

35.3.1 क्रिप्स मिशन

35.3.2 कैबिनेट मिशन

35.3.3 संविधान सभा का चुनाव

35.4 संविधान सभा में प्रतिनिधित्व की प्रकृति

35.5 संविधान सभा की भूमिका 1946-1949

35.6 भारत के संविधान का दर्शन

35.7 संविधान की प्रमुख विशेषताएँ

35.7.1 बुनियादी अधिकार और राज्य के नीति निर्देशक सिद्धांत

35.7.2 सार्वभौमिक बालिग मताधिकार और पृथक निर्वाचक मंडल का त्याग

35.8 सारांश

35.9 अभ्यास

35.1 प्रस्तावना

भारत का संविधान 26 नवंबर 1949 को अपनाया गया जिसका मतलब यह है कि संविधान सभा ने इसी दिन उसे अंतिम रूप दिया। लेकिन इसे अपनाने के दो महीने बाद 26 जनवरी 1950 को लागू किया गया और इसे ही इसके "लागू" होने की तिथि के रूप में जाना जाता है। बहरहाल इसके कुछ प्रावधान (नागरिकता, चुनाव, अंतरिम संसद से जुड़े हुए अस्थायी और संक्रमणकालीन प्रावधान) 26 नवंबर 1949 से ही लागू हो गए। अपनाए जाने के दो महीने बाद लागू होने का कारण 26 जनवरी को स्वाधीनता प्राप्ति की मूल तिथि के रूप में महत्व देना था। इसका उल्लेख महत्वपूर्ण है कि भारत का संविधान बहस मुबाहिसे की लंबी प्रक्रिया का परिणाम था। इस इकाई में भारतीय संविधान के निर्माण से जुड़े हुए कुछ मुद्दों पर विचार किया जाएगा। इस इकाई को पढ़ने के बाद आप सीखेंगे :

- संविधान सभा के निर्माण से पहले संविधान बनने के विभिन्न चरणों के बारे में;
- संविधान सभा में प्रतिनिधित्व की प्रकृति के बारे में;
- भारतीय संविधान के दर्शन के बारे में; और

* इकाई लेखक – प्रो. जगपाल सिंह

- भारतीय संविधान की कुछ विशेषताओं पर संविधान सभा के भीतर की बहसों के बारे में।

35.2 भारत के संविधान का विकास 1858-1935

भारत का संविधान जो लोग देश के नागरिक नहीं हैं उनके समेत सभी मनुष्यों के बुनियादी लोकतांत्रिक अधिकारों को मुहैया कराने वाले प्रावधानों का साकार रूप है। इसमें इन अधिकारों की पूर्ति के लिए कानून निर्माण, उसका अनुपालन और विवाद की स्थिति में न्यायिक संस्थाओं की उपलब्धता का प्रावधान भी है। इसमें सामाजिक रूपांतरण और लोकतंत्र को गहरा करने की दृष्टि भी प्रस्तुत की गई है। संविधान सभा ने जब भारत का संविधान बनाया उसके बहुत पहले से लोकतांत्रिक संस्थाओं और अधिकारों के विकास की प्रक्रिया शुरू हो चुकी थी। बहरहाल इस बात पर जोर देना होगा कि औपनिवेशिक काल में जिन लोकतांत्रिक संस्थाओं और मूल्यों की विशेषताएँ इसमें शामिल थीं उनका मकसद औपनिवेशिक हितों की सेवा करना था, जो संविधान सभा द्वारा निर्मित संविधान के प्रावधानों के उद्देश्य के विपरीत था।

हालांकि भारत का संविधान देश की संविधान सभा की बैठकों/बहसों (9 दिसंबर 1947 से 26 नवंबर 1949 तक) का परिणाम था लेकिन इसकी कुछ विशेषताओं का विकास लंबे अरसे में यानी 1858 से 1935 तक पारित विभिन्न ऐक्टों के जरिए हुआ। औपनिवेशिक अधिकारियों द्वारा प्रशासन की संस्थाओं के निर्माण का कदम निश्चय ही अंग्रेजों के विरुद्ध प्रतिरोध के जवाब के बतौर उठाया गया था। अगर ईस्ट इंडिया कंपनी के हाथों से शासन छीन लेना 1857 के विद्रोह की प्रतिक्रिया थी तो बाद के ऐक्ट अंग्रेजों के विरुद्ध राष्ट्रवादी आंदोलन का उत्तर थे। ऐसा करने के पीछे प्रमुख उद्देश्य औपनिवेशिक शासन को जारी रखना और बदलती चुनौतियों के अनुरूप उसे ढालना था। ईस्ट इंडिया कंपनी से शासन ज्यों ही ब्रिटिश ताज को हस्तांतरित हुआ भारत के मामलों में ब्रिटेन की संसद की भागीदारी होने लगी। इसके लिए उसने तमाम कानून बनाए, जो हमारे संविधान की नींव बने या उसकी पृष्ठभूमि तैयार की। इस दौरान ब्रिटेन की संसद ने ऐसे ऐक्ट बनाए जिन्होंने सरकार के अंग-न्यायपालिका और कार्यपालिका की प्रकृति को परिभाषित किया; हालांकि सीमित प्रकृति का ही लेकिन प्रातिनिधिक लोकतंत्र, विकेंद्रीकरण, अल्पसंख्यक अधिकार/सांप्रदायिक प्रतिनिधित्व और प्रांतीय स्वायत्तता की धारणा लागू की। इस बात को ध्यान में रखना जरूरी है कि स्वतंत्र भारत में निर्मित संविधान की ये ही विशेषताएँ बनीं। बहरहाल जैसा पहले कहा जा चुका है इन प्रावधानों की प्रकृति स्वतंत्र भारत की जनता द्वारा अपनाए गए संविधान से भिन्न थी। ये प्रावधान स्वाधीनता से पहले के दौर में विभिन्न ऐक्टों के जरिए लागू किए गए – ये थे 1857, 1919 और 1935 के गवर्नमेंट ऑफ इंडिया ऐक्ट : 1861, 1892 के कौंसिल ऑफ इंडिया ऐक्ट; 1909 के मोर्ले-मिंटो सुधार। इन सारे ऐक्टों को एक समेकित ऐक्ट-1935 का गवर्नमेंट ऑफ इंडिया ऐक्ट में बदला गया। विधायिका, कार्यपालिका और न्यायपालिका की अलग-अलग शाखाओं को अब तक विभिन्न ऐक्टों के बिखरे हुए प्रावधानों के जरिए चलाया जाता था, उन सबको एक ऐक्ट के मातहत लाना इस ऐक्ट का मकसद था। आप जानते हैं कि 1919 के गवर्नमेंट ऑफ इंडिया ऐक्ट के प्रावधानों का कांग्रेस ने विरोध किया था और

असहयोग आंदोलन शुरू किया था। और इसके जवाब में ब्रिटिश सरकार ने 1919 ऐक्ट की व्यावहारिकता की समीक्षा के लिए साइमन कमीशन की नियुक्ति की थी। हालांकि कांग्रेस ने साइमन कमीशन का बहिष्कार किया था फिर भी ढेर सारे लोगों ने साइमन कमीशन को ज्ञापन दिए थे। 1930 में साइमन कमीशन ने अपनी रिपोर्ट जमा की। लंदन में गोलमेज सम्मेलन में ब्रिटिश सरकार साइमन कमीशन की उस रिपोर्ट को बहस के लिए ले आई। बहरहाल ब्रिटिश प्रधानमंत्री ने 4 अगस्त 1932 को "कम्यूनल अवार्ड" जारी किया जिसमें कहा गया कि साइमन कमीशन की रिपोर्ट पर बहस से पहले समाधान के लिए हिंदुओं और मुस्लिमों को कुछ सहमति बनानी पड़ेगी। इसमें माना गया था कि 1919 के गवर्नमेंट ऑफ इंडिया ऐक्ट के लागू होने के बाद हिंदुओं और मुस्लिमों के बीच की खाई चौड़ी हो गई है। गोलमेज सम्मेलन की बहसों के बाद ब्रिटिश सरकार ने 1935 का गवर्नमेंट ऑफ इंडिया ऐक्ट पारित किया जिसमें मुस्लिमों, सिखों, यूरोपियों, भारतीय ईसाइयों और एंग्लो-इंडियनों के लिए पृथक प्रतिनिधित्व मुहैया कराया गया था। 1935 के गवर्नमेंट ऑफ इंडिया ऐक्ट की रोशनी में 1937 में प्रांतीय असेम्बलियों के चुनाव हुए और कई प्रांतों में कांग्रेस ने सरकारें बनाईं। बहरहाल कांग्रेसी सरकारें अपना कार्यकाल पूरा नहीं कर सकीं और अपना कार्यकाल पूरा होने से पहले ही उन्हें इस्तीफा देना पड़ा।

ये घटनाएँ भारतीयों द्वारा ही संविधान बनाने की माँग की पृष्ठभूमि में घट रही थीं। 1928 में स्थापित अखिल भारतीय पार्टियों (मद्रास में जस्टिस पार्टी और पंजाब में यूनियनिस्ट पार्टी को छोड़कर) के सम्मेलन में नेहरू रिपोर्ट के जरिए भारत का संविधान तैयार करने की पहली कोशिश की गई। नेहरू रिपोर्ट ने सार्वभौमिक वयस्क मताधिकार तथा प्रांतों और केंद्र दोनों में जिम्मेदार सरकार की माँग की। बहरहाल इसने पूर्ण स्वाधीनता की जगह डोमिनियन स्टेटस का समर्थन किया जिससे कांग्रेस की युवा पीढ़ी को निराशा हुई। 1934 में कांग्रेस ने आधिकारिक रूप से बाहरी हस्तक्षेप से रहित भारतीय जनता के संविधान की माँग की। भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस को इसकी जरूरत स्टैच्यूटरी कमीशन और गोलमेज सम्मेलन की असफलता से महसूस हुई। हालांकि 1922 में असहयोग आंदोलन के दौरान राष्ट्रीय नेताओं द्वारा स्वराज की माँग की गई थी लेकिन 1938 में जाकर जवाहरलाल नेहरू और कांग्रेस ने स्वतंत्र भारत के मामलों के प्रशासन के लिए संविधान बनाने हेतु संविधान सभा की माँग की। कांग्रेस वर्किंग कमेटी ने 1939 में इस माँग को दुहराया।

35.3 संविधान सभा का निर्माण

35.3.1 क्रिप्स मिशन

शुरू में औपनिवेशिक शासकों ने संविधान निर्माण की माँग का प्रतिरोध किया। लेकिन परिस्थितियों में बदलाव – द्वितीय विश्य युद्ध का आरम्भ और ब्रिटेन में नई (लेबर पार्टी के नेतृत्व में) गठबंधन सरकार का निर्माण – ने ब्रिटिश सरकार को बाध्य कर दिया कि वह भारतीयों के लिए संविधान से जुड़ी हुई समस्या को हल करने की जरूरत माने। 1942 में ब्रिटिश सरकार ने अपने मंत्रिमंडल के सदस्य सर स्टैफर्ड क्रिप्स को (भारतीयों के लिए एक संविधान के सिलसिले में) ऐसे प्रस्तावों की मसौदा घोषणा के साथ भेजा जिन्हें द्वितीय विश्व युद्ध के खात्मे पर लागू किया जाना था बशर्ते मुस्लिम लीग और कांग्रेस दोनों उन्हें स्वीकार करने पर सहमत हों।

क्रिप्स मिशन के मसौदा प्रस्तावों में निम्नांकित संस्तुतियाँ थीं: डोमिनियन स्टेटस मुहैया कराना यानी ब्रिटिश कामनवेल्थ ऑफ नेशंस में बराबर की भागीदारी, भारत के सभी प्रांत और रियासतें मिलकर ब्रिटिश संविधान द्वारा एकल इंडिया यूनियन बनेंगे; भारत का संविधान भारतीय जनता की चुनी हुई संविधान सभा बनाएगी लेकिन अगर कोई प्रांत (या भारतीय रियासत) संविधान को स्वीकार करने को तैयार न हो तो वह उस समय मौजूद संवैधानिक स्थिति को बरकरार रखने को स्वतंत्र होगा और ऐसे प्रांत पृथक संवैधानिक व्यवस्था में प्रवेश करने के लिए आजाद होंगे।

क्रिप्स मिशन के प्रस्तावों को भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस और मुस्लिम लीग दोनों ने स्वीकार नहीं किया। मुस्लिम लीग ने माँग की कि भारत को सांप्रदायिक आधार पर बांटा जाए और कुछ प्रांतों को मिलाकर पाकिस्तान नामक स्वतंत्र राष्ट्र बनना चाहिए तथा एक पाकिस्तान के लिए और दूसरी भारत के लिए, दो संविधान सभाओं का गठन किया जाए।

35.3.2 कैबिनेट मिशन

भारत की ब्रिटिश सरकार ने कांग्रेस और मुस्लिम लीग के बीच के अंतर को पाटने की कई कोशिशें कीं। लेकिन उसे सफलता नहीं मिली। ब्रिटिश सरकार ने मंत्रिमंडल के सदस्यों का एक दूसरा प्रतिनिधिमंडल भेजा, जिसे कैबिनेट डेलीगेशन कहा गया और इसे ही कैबिनेट मिशन योजना के रूप में भी जाना गया। इसमें तीन सदस्य थे – लार्ड पेथिक-लारेन्स, सर स्टैफर्ड क्रिप्स और मिस्टर ए वी अलेक्जेंडर। कैबिनेट डेलीगेशन भी भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस और मुस्लिम लीग में समझौता कराने में असफल रहा। बहरहाल इसने अपना प्रस्ताव तैयार किया, जो 16 मई 1946 को एक साथ इंग्लैंड और भारत में घोषित किया गया। कैबिनेट डेलीगेशन ने निम्नांकित संस्तुतियाँ कीं : ब्रिटिश भारत और रियासतों को मिलाकर यूनियन ऑफ इंडिया बनेगा जिसका न्यायाधिकार विदेशी मामलों, रक्षा और संचार पर होगा; समस्त अवशिष्ट शक्तियाँ प्रांतों और रियासतों को हासिल होंगी; यूनियन यानी संघ में कार्यपालिका और विधायिका होगी, जिसमें प्रांतों और रियासतों के प्रतिनिधि होंगे लेकिन विधायिका में किसी बड़े सांप्रदायिक निर्णय के सिलसिले में दोनों प्रमुख संप्रदायों के प्रतिनिधियों की बहुसंख्या को विधायिका में उपस्थित रहना और सभी उपस्थित सदस्यों की बहुसंख्या के साथ उनका मत देना जरूरी होगा तथा मतदान आवश्यक होगा और; प्रांतों को आजादी होगी कि वे कार्यपालिका और विधायिका के साथ गुट बना सकें तथा प्रत्येक गुट यह तय करने के लिए आजाद होगा कि गुट के भीतर किन विषयों को उठाया जाए।

35.3.3 संविधान सभा का चुनाव

इसी बीच कैबिनेट मिशन के प्रस्तावों के अनुरूप संविधान सभा के लिए चुनाव संपन्न हुए जिसमें कांग्रेस और मुस्लिम लीग दोनों के सदस्य जीतकर वापस आए। संविधान सभा के सदस्यों का चुनाव प्रांतीय विधायी सभाओं ने किया था। बहरहाल कांग्रेस और मुस्लिम लीग के बीच कैबिनेट मिशन के "ग्रुप उपबंधों" की व्याख्या को लेकर अंतर पैदा हो गए। इस मौके पर ब्रिटिश सरकार ने हस्तक्षेप किया और लंदन में नेताओं को समझाया कि मुस्लिम लीग का दावा जायज है। 6 दिसंबर 1946 को ब्रिटिश सरकार ने एक वक्तव्य प्रकाशित किया जिसमें पहली बार दो

संविधान सभाओं और दो राष्ट्रों की संभावना मानी गई। नतीजा यह निकला कि जब 9 दिसंबर 1946 को पहली बार संविधान सभा की बैठक हुई तो मुस्लिम लीग ने इसका बहिष्कार किया और मुस्लिम लीग की भागीदारी के बिना यह अपना काम करती रही।

35.4 संविधान सभा में प्रतिनिधित्व की प्रकृति

अक्सर यह बात कही जाती है कि भारत की संविधान सभा भारत की जनता का प्रतिनिधित्व नहीं करती थी क्योंकि इसके प्रतिनिधियों का चुनाव सार्वभौमिक बालिग मताधिकार के आधार पर नहीं हुआ था। इसकी जगह उनका चुनाव सीमित बालिग मताधिकार के आधार पर अप्रत्यक्ष तरीके से हुआ था। यह मताधिकार समाज के कुलीन तबकों– शिक्षितों और टैक्स चुकाने वाले– तक सीमित था। आस्टिन के अनुसार, संविधान सभा के सदस्यों का सीमित मताधिकार के आधार पर अप्रत्यक्ष चुनाव के कारण कैबिनेट मिशन योजना में वर्णित थे – संविधान निर्माण की प्रक्रिया में तकलीफदेह और धीमी प्रगति से बचाव। कैबिनेट मिशन के अनुसार, संविधान सभा का अप्रत्यक्ष चुनाव प्रांतीय विधायिका के चुने हुए सदस्यों द्वारा किया गया। कैबिनेट मिशन के इस प्रस्ताव से कांग्रेस सहमत हो गई और उसने संविधान सभा का चुनाव कराने के लिए बालिग मताधिकार के दावे को छोड़ दिया। सीमित बालिग मताधिकार के आधार पर चुने होने के बावजूद संविधान सभा में भारत के विभिन्न मतों और धार्मिक समुदायों का प्रतिनिधित्व था। आस्टिन का कहना है कि हालांकि संविधान सभा में कांग्रेस का बहुमत था लेकिन यह एक "अलिखित और असंदिग्ध विश्वास" था कि कांग्रेस सामाजिक और वैचारिक विविधता का प्रतिनिधित्व करेगी। इसकी "सचेत नीति" थी कि संविधान सभा में विभिन्न अल्पसंख्यक समुदायों और विचारों का प्रतिनिधित्व होना चाहिए। संविधान सभा में अलग-अलग वैचारिक झुकावों वाले सदस्य थे, जो तीन धार्मिक समुदायों-सिख, मुस्लिम और सामान्य (हिंदू तथा अन्य समुदाय जैसे आंग्ल-भारतीय, पारसी आदि) के थे। के शांताराम के शब्दों में "शायद ही कोई वैचारिकी रही होगी जिसका प्रतिनिधित्व संविधान सभा में न हो" (देखें, आस्टिन, 2012, पृष्ठ 13, टिप्पणी 48)। संविधान सभा के सदस्यों की बहुसंख्या कांग्रेसी थी। इसमें ए के अय्यर और एन जी आयंगर जैसे गैर-कांग्रेसी सदस्य भी थे जिन्हें "विशेषज्ञ" के रूप में कांग्रेस ले आई थी; डाक्टर अंबेडकर और जान मथाइ थे जो मंत्रिमंडल में भी थे; एस पी मुखर्जी हिंदू महासभा के प्रतिनिधि थे। संविधान सभा में देसी रियासतों के भी प्रतिनिधि थे। यह बताना जरूरी है कि शुरू में डाक्टर अंबेडकर संविधान सभा में शेड्यूल कास्ट फेडरेशन के सदस्य के रूप में बंगाल से चुने गए थे। लेकिन बंगाल के बंटवारे के चलते उनकी सीट जाती रही और कांग्रेस के आला कमान के अनुरोध पर बांबे कांग्रेस द्वारा (गैर-कांग्रेसी प्रत्याशी के बतौर) पुनर्निर्वाचित हुए। संविधान सभा ने किसी की भी सामाजिक या सांस्कृतिक दिशा का ध्यान रखे बिना प्रत्येक व्यक्ति के सरोकारों को समझना चाहा। संविधान में कोई भी प्रावधान शामिल करने से पहले विस्तार से उस पर चर्चा होती थी। इस तरह संविधान सभा के सदस्य सीमित मताधिकार से निर्वाचित होने की सीमाओं पर विजय पा सके। जैसा कि हम इस इकाई में बता रहे हैं संविधान सभा ने लोकतंत्र के सार्वभौमिक मूल्यों को समाहित करना चाहा। संविधान सभा ने दुनिया के विभिन्न संविधानों से कई प्रावधानों को अपनाया और उन्हें भारत की जरूरत के मुताबिक ढाल लिया।

आस्टिन का कहना है कि असल में संविधान में अन्य देशों से लिए गए प्रावधानों सहित विभिन्न प्रावधानों को शामिल करते हुए संविधान सभा ने अपने सदस्यों के बीच मतभेद के समाधान के लिए "दो पूरी तरह से भारतीय धारणाओं" यानी सर्वसम्मति और समायोजन का रास्ता अपनाया। जहाँ कहीं संविधान में सिद्धांतों को शामिल करने के मामले में समायोजन की धारणा का इस्तेमाल किया गया वहाँ भी निर्णय लेने की प्रक्रिया में सर्वसम्मति का रास्ता अपनाया गया।

संविधान सभा की कार्यवाही में उसके अधिकांश सदस्यों ने भाग लिया। लेकिन बीस लोग थे जिन्होंने सभा में सबसे प्रभावकारी भूमिका निभाई। उनमें थे प्रसाद, असद, पटेल, नेहरू, पंत, सीतारामैया, अय्यर, आयंगर, अंबेडकर और सत्यनारायण सिन्हा। हालांकि संविधान सभा ही वह मंच था जहाँ बहसें होती थीं फिर भी तीन संस्थाओं– संविधान सभा, कांग्रेस पार्टी और अंतरिम सरकार– के संयोजन से बहसें हुईं। संविधान सभा के कुछ सदस्य साथ ही अन्य संस्थाओं के भी सदस्य थे। आस्टिन का कहना है कि संविधान सभा में नेहरू, पटेल, प्रसाद और असद इन चार लोगों को असंदिग्ध इज्जत और सम्मान हासिल था। संविधान सभा की कार्यवाही पर इनका दबदबा था। इनमें से कुछ लोग एक साथ सरकार, कांग्रेस पार्टी और संविधान सभा में थे। संविधान सभा का अध्यक्ष बनने से पहले प्रसाद कांग्रेस के अध्यक्ष थे। नेहरू और पटेल संविधान सभा के साथ साथ प्रधानमंत्री और उप प्रधानमंत्री भी थे। वे लोग संविधान सभा की समितियों के अंदरूनी दायरों में थे। संविधान का मसौदा लिखने वाली समिति ने परिश्रम के साथ संविधान सभा के फैसलों को मसौदे में शामिल किया। मसौदा समिति के अध्यक्ष डाक्टर बी आर अंबेडकर ने संविधान के लिखने में नेतृत्वकारी भूमिका निभाई। अंबेडकर की महत्वपूर्ण भूमिका को रेखांकित करते हुए मसौदा समिति के एक सदस्य टी टी कृष्णमचारी ने एक भाषण में कहा :

"शायद यह सदन अवगत होगा कि आप द्वारा नामित सात सदस्यों में से एक ने सदन से इस्तीफा दे दिया था और उनकी जगह कोई और आए। एक का देहान्त हो गया और उनकी जगह खाली रही। एक सुदूर अमेरिका में थे और उनकी जगह भरी नहीं गई तथा एक अन्य सदस्य राजकीय कामों में व्यस्त रहे और कोई योगदान नहीं कर सके। एक या दो लोग दिल्ली से काफी दूर थे और शायद स्वास्थ्य ने उन्हें भागीदारी का मौका नहीं दिया। इसलिए आखिरकार हुआ यह कि इस संविधान को लिखने का बोझ डाक्टर अंबेडकर पर पड़ा और मुझे कोई शक नहीं कि जिस प्रशंसनीय तरीके से उन्होंने इस काम को निभाया उसके लिए हम उनके आभारी हैं।"

35.5 संविधान सभा की भूमिका 1946-1949

संविधान सभा का उद्घाटन सत्र 9 दिसंबर 1946 को संपन्न हुआ। उम्मीद थी कि इसमें सभी 296 सदस्य भाग लेंगे लेकिन केवल 207 सदस्य ही इसमें रहे क्योंकि मुस्लिम लीग द्वारा संविधान सभा के बहिष्कार के चलते मुस्लिम लीग के सदस्य इसमें शामिल नहीं हुए। इस बैठक में जे बी कृपलानी ने डाक्टर सच्चिदानंद से अनुरोध किया कि वे सदन के अस्थायी अध्यक्ष के रूप में अध्यक्षता करें। 10 दिसंबर 1946 को सदस्यों ने एक स्थायी अध्यक्ष के चुनाव के लिए प्रस्ताव पारित किया और 11 दिसंबर 1946 को डाक्टर राजेंद्र प्रसाद को संविधान सभा का स्थायी

अध्यक्ष चुना गया। 13 दिसंबर 1946 को जवाहरलाल नेहरू ने लक्ष्य और उद्देश्य के सिलसिले में प्रस्ताव पेश किया।

सुचारु संचालन के लिए संविधान सभा ने अपना काम विभिन्न समितियों में बांटा। कुछेक महत्वपूर्ण समितियाँ थीं : (क) संघीय शक्ति समिति – इसके अध्यक्ष जवाहरलाल नेहरू थे और इसमें नौ सदस्य थे; (ख) बुनियादी अधिकारों और अल्पसंख्यक समिति – इसके 54 सदस्य थे और सरदार बल्लभभाई पटेल इसके अध्यक्ष थे; (ग) संचालन समिति और इसके तीन सदस्य जिनमें के एम मुंशी (अध्यक्ष), गोपालस्वामी आयंगर तथा भगवान दास थे; (घ) प्रांतीय संविधान सभा – इसमें 25 सदस्य थे और अध्यक्ष सरदार पटेल थे; (ङ) संघीय संविधान समिति – इसमें अध्यक्ष जवाहरलाल नेहरू सहित 15 सदस्य थे।

इन समितियों की रपटों पर विचार करने के बाद सभा ने 29 अगस्त 1947 को डाक्टर बी आर अंबेडकर की अध्यक्षता में एक ड्राफ्टिंग कमेटी की नियुक्ति की। संविधान सभा के सलाहकार सर बी एन राउ ने ड्राफ्ट यानी मसौदा तैयार किया। मसौदे की जाँच के लिए सात सदस्यों की एक समिति गठित की गई। डाक्टर अंबेडकर ड्राफ्टिंग समिति के अध्यक्ष होने के अतिरिक्त कानून मंत्री भी थे। उन्होंने सभा में मसौदे को अंतिम रूप दिया। डाक्टर अंबेडकर ने "ड्राफ्ट कंस्टीच्यूशन ऑफ इंडिया" पेश किया जो समितियों द्वारा दिए गए प्रस्तावों का विकल्प था; उनके अलावा इसमें अतिरिक्त प्रस्ताव भी थे। फरवरी 1948 में "ड्राफ्ट कंस्टीच्यूशन" प्रकाशित हुआ। संविधान सभा ने अपने कई अधिवेशनों में इस पर अनुच्छेद दर अनुच्छेद विचार किया (इसे दूसरा पाठ कहा जाता है)। यह काम 17 अक्टूबर 1949 को पूरा हुआ। 14 नवंबर को संविधान सभा की बैठक फिर से हुई ताकि इस मसौदे पर और भी विचार किया जाए या इसका तीसरा पाठ संपन्न हो। 26 नवंबर 1949 को संविधान सभा के अध्यक्ष का हस्ताक्षर मिलने के बाद इसे अंतिम रूप दिया गया। लेकिन 26 जनवरी 1950 को संविधान के लागू होने की तारीख माना गया।

35.6 भारत के संविधान का दर्शन

नीचे दी गई संविधान की उद्देशिका से स्पष्ट है कि भारत के संविधान का दर्शन सामाजिक जनवाद के कुछ तत्वों के साथ उदार लोकतंत्र और धर्मनिरपेक्षता के सिद्धांतों पर आधारित है। यह व्यक्तियों के अधिकारों – न्याय, स्वतंत्रता, समानता, बंधुता तथा सामाजिक और धार्मिक समुदायों के सांस्कृतिक और धार्मिक अधिकारों की रक्षा करना चाहता है। संविधान सभा में उद्देश्य प्रस्ताव पर गंभीर बहस के बाद **संविधान की उद्देशिका अंगीकार की गई। वस्तुतः संविधान सभा की बहसों की शुरुआत उद्देश्य प्रस्ताव पर बहसों से हुई। आगे हम उद्देश्य प्रस्ताव और उद्देशिका पर विचार करेंगे।**

उद्देश्य प्रस्ताव और संविधान की उद्देशिका

जैसा पहले ही बताया गया है संविधान सभा की बैठक के चौथे दिन 13 दिसंबर 1946 को जवाहरलाल नेहरू ने संविधान सभा के लक्ष्य और उद्देश्य के संबंध में उद्देश्य प्रस्ताव पेश किया। इस प्रस्ताव को उद्देश्य प्रस्ताव कहा जाता है। प्रस्ताव में लक्ष्य और उद्देश्य के बतौर आठ विंदु या अनुच्छेद दिए गए हैं। इन लक्ष्यों और उद्देश्यों में शामिल थे :

1) भारत को एक स्वतंत्र, सम्पूर्ण प्रभुत्वसंपन्न गणराज्य घोषित करना और इसके आगामी प्रशासन के लिए एक संविधान बनाना;

2) भारत ऐसे भू-भागों का संघ होगा, जिसमें ब्रिटिश भारत, देशी रियासतों का इलाका और वे भू-भाग जो स्वतंत्र, सम्पूर्ण प्रभुत्वसंपन्न भारत के अंग होना चाहते हैं, शामिल होंगे;

3) संघ के भू-भाग स्वायत्त इकाइयों की स्थिति में होंगे और बने रहेंगे, उन्हें अवशिष्ट अधिकार हासिल होंगे, वे सरकार और प्रशासन की उन सभी शक्तियों का उपयोग कर सकेंगे जो शक्तियाँ और कार्य संघ में निहित या उसे प्रदत्त नहीं हैं;

4) सम्पूर्ण प्रभुत्वसंपन्न स्वतंत्र भारत और उसके घटक हिस्सों और अंगों की समस्त शक्तियाँ और प्राधिकार जनता से निरूसृत होते हैं;

5) इसे भारत के सभी लोगों के लिए न्याय, सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक हैसियत की, अवसर के मामले में और कानून के समक्ष समानता की; चिंतन, अभिव्यक्ति, विश्वास, धर्म, उपासना, व्यवसाय, संगठन और कार्यवाही की आजादी, बशर्ते कानून और सार्वजनिक नैतिकता का उल्लंघन न हो, की गारंटी करना होगा;

6) इसे अल्पसंख्यकों, पिछड़े और आदिवासी इलाकों, तथा दलित और अन्य पिछड़े वर्गों के लिए पर्याप्त सुरक्षा उपलब्ध करानी होगी;

7) इसे सभ्य देशों के कानून और न्याय के अनुसार, गणतंत्र की भू-भागीय अखंडता को बनाए रखना होगा तथा भूमि, समुद्र और आकाश पर संप्रभु अधिकारों की रक्षा करनी होगी;

8) दुनिया में इस प्राचीन देश को यथोचित और सम्मानजनक स्थान दिलाना तथा विश्व शांति और मानव कल्याण को बढ़ावा देने में सम्पूर्ण और स्वैच्छिक योगदान सुनिश्चित करना होगा।

उद्देश्य प्रस्ताव पर बहस का डाक्टर अंबेडकर के लिए विशेष महत्व था। इस प्रस्ताव पर उन्होंने "ऐतिहासिक भाषण" दिया। जब 16 दिसंबर 1946 को उद्देश्य प्रस्ताव पर बहस के लिए सदन की बैठक हुई तो डाक्टर एम आर जयकर ने उद्देश्य प्रस्ताव में एक संशोधन पेश करते हुए प्रस्ताव पर बहस को स्थगित करने की माँग की क्योंकि वे चाहते थे कि मुस्लिम लीग और देशी रजवाड़े भी बहस में भाग लें। इससे "सदन में तनाव का वातावरण" पैदा हो गया। ऐसी स्थिति में 17 दिसंबर 1946 को भाषण देने के लिए "अप्रत्याशित रूप से" डाक्टर राजेंद्र प्रसाद को बुलाया गया। उनके भाषण के प्रभाव स्वरूप प्रस्ताव पर बहस को अगले अधिवेशन तक के लिए स्थगित कर दिया गया।

संविधान की उद्देशिका

हम, भारत के लोग, भारत को एक सम्पूर्ण प्रभुत्वसंपन्न समाजवादी धर्मनिरपेक्ष लोकतांत्रिक गणराज्य बनाने के लिए, तथा उसके समस्त नागरिकों को :

सामाजिक, आर्थिक और राजनैतिक न्याय;

विचार, अभिव्यक्ति, विश्वास, धर्म और उपासना की स्वतंत्रता;

प्रतिष्ठा और अवसर की समानता प्राप्त कराने के लिए; तथा उन सबमें

व्यक्ति की गरिमा और *राष्ट्र की एकता और अखंडता* सुनिश्चित कराने वाली बंधुता बढ़ाने के लिए; दृढ़ संकल्प होकर अपनी संविधान सभा में आज तारीख 26 नवम्बर 1949 को एतद् द्वारा इस संविधान को अंगीकृत, अधिनियमित और आत्मार्पित करते हैं।

35.7 संविधान की प्रमुख विशेषताएँ

भारतीय संविधान की कुछ प्रमुख विशेषताएँ हैं। इन विशेषताओं के चलते भारतीय संविधान की अलग पहचान बनती है। यह दुनिया के विभिन्न संविधानों की विशेषताओं पर आधारित है। डाक्टर अंबेडकर के शब्दों में इसका निर्माण "दुनिया के सभी ज्ञात संविधानों को छानने के बाद" हुआ। मौलिक अधिकारों वाला अध्याय अमेरिकी संविधान पर आधारित है; संसदीय प्रणाली ब्रिटिश संविधान से ली गई है; राज्य के नीति निर्देशक सिद्धांत आयरलैंड के संविधान से ग्रहण किए गए हैं; आपातकालीन प्रावधान जर्मन रीख के संविधान और 1935 के गवर्नमेंट ऑफ इंडिया ऐक्ट पर आधारित हैं। लेकिन जैसा पहले ही कहा गया है दूसरे संविधानों से जो भी विशेषताएँ ली गई हैं उन्हें हमारे देश की जरूरतों की रोशनी में ढाला गया है। यह सबसे बड़ा लिखित संविधान है। निर्माण के समय इसमें 395 धाराएँ और 8 अनुसूचियाँ थीं। इसमें वादयोग्य गैर-वादयोग्य अधिकारों : मौलिक अधिकारों और राज्य के नीति निर्देशक सिद्धांतों की सुनिश्चिति है। इनमें से दो महत्वपूर्ण विशेषताओं पर हम विचार करेंगे-मौलिक अधिकार और राज्य के नीति निर्देशक सिद्धांत, पृथक निर्वाचक मंडल का त्याग और सार्वभौमिक बालिग मताधिकार।

35.7.1 बुनियादी अधिकार और राज्य के नीति निर्देशक सिद्धांत

मौलिक अधिकार राज्य को व्यक्ति के अधिकारों में दखल देने से रोकते हैं और राज्य के नीति निर्देशक सिद्धांत राज्य के लिए इस बात को बाध्यकारी बना देते हैं कि वह सामाजिक क्रांति को आगे बढ़ाने के लिए कदम उठाए। संविधान के क्रमशः तीसरे और चौथे भाग में वे अंकित हैं। भारतीय संविधान में मौलिक अधिकारों को सात भागों में बांटा गया है – समानता का अधिकार, स्वतंत्रता का अधिकार, शोषण के विरुद्ध अधिकार, धर्म की स्वतंत्रता का अधिकार, सांस्कृतिक और शैक्षणिक अधिकार, सम्पत्ति का अधिकार, तथा संविधानिक उपचारों का अधिकार। भारत के संविधान में उन्हें शामिल करने से पहले भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के कई प्रस्तावों में मौलिक अधिकारों तथा सामाजिक रूपांतरण के लिए राजकीय उपाय उपलब्ध कराने की जरूरत पर जोर दिया गया था : कामनवेल्थ ऑफ इंडिया बिल का एनी बेसेन्ट का मसौदा, नेहरू रिपोर्ट, कराची प्रस्ताव, 1945 की सप्रू रिपोर्ट। सप्रू रिपोर्ट का खास महत्व है क्योंकि इसमें मौलिक अधिकारों और राज्य के नीति निर्देशक सिद्धांतों के अतिरिक्त अल्पसंख्यकों की सुरक्षा के प्रावधान भी सुझाए गए थे। इसमें ही पहली बार मौलिक अधिकारों को वादयोग्य और राज्य के नीति निर्देशक सिद्धांतों को गैर-वादयोग्य अधिकार कहकर उनमें अंतर किया गया था।

मौलिक अधिकारों वाली संविधान सभा की उप समिति में अधिकारों पर कोई सैद्धांतिक मतभेद नहीं था, हालांकि कुछ तकनीकी मतभेद थे। इसने सुझाव दिया कि मौलिक अधिकारों को वादयोग्य बनाना चाहिए। बहरहाल उप समिति ने सुझाव दिया कि मौलिक अधिकारों के सिलसिले में राज्य पर नकारात्मक रोक के बावजूद वह सामाजिक क्रांति के हित में दखल दे सकता है। अमृत कौर ने अय्यर के समर्थन से मौलिक अधिकारों में धर्म के स्वतंत्र "व्यवहार" की अनुमति का विरोध किया था क्योंकि इसमें देवदासी, सती और पर्दाप्रथा जैसे "समाज-विरोधी" आचरण शामिल हो सकते हैं। इस विरोध के फलस्वरूप संविधान में प्रावधान किया गया कि धर्म के स्वतंत्र आचरण के अधिकार के कारण राज्य को सामाजिक कल्याण और सुधार के कानून बनाने से रोका नहीं जा सकता। "कानून के समक्ष समानता" के बारे में उप समिति के सुझाव के सिलसिले में अय्यर का मानना था कि इससे कारखाने के मजदूर, बच्चे और औरतों जैसे समाज के हाशिए पर पड़े समुदायों के विरुद्ध भेदभाव हो सकता है। उन्होंने सुझाव दिया कि "कानून के समक्ष समानता" की जगह कहा जाए कि "कानून की समान सुरक्षा से कोई व्यक्ति वंचित नहीं होगा"। इस सुझाव को संविधान में शामिल कर लिया गया। उप समिति ने व्यक्तिगत स्वतंत्रता और राजकीय जिम्मेदारी के बीच टकराव तथा अल्पसंख्यक अधिकारों की रक्षा जैसे मामलों पर भी विचार किया। इस बहस के फलस्वरूप जबरिया श्रम और मानव तस्करी के खात्मे, धर्म के आचरण की स्वतंत्रता सम्बन्धी प्रावधान आए तथा लिपि और संस्कृति की रक्षा और अल्पसंख्यकों को अपनी शैक्षिक संस्थाओं को बनाए रखने का अधिकार सम्बन्धी विशेष प्रावधान बने। इन सभी प्रावधानों को संविधान में जगह मिली।

35.7.2 सार्वभौमिक बालिग मताधिकार और पृथक निर्वाचक मंडल का त्याग

मौलिक अधिकारों की मसौदा सूची पर विचार करने के बाद मौलिक अधिकारों की उप समिति ने उन सबको संविधान के भाग तीन में मौलिक अधिकारों के बतौर शामिल करने की अनुशंसा नहीं की। उन्होंने सुझाया कि इसके बजाए इन्हें संविधान में अन्य जगहों पर समाहित कर लिया जाए। इसका एक उदाहरण सार्वभौमिक मताधिकार और समयबद्ध चुनाव है। एकमत से उप समिति सार्वभौमिक मताधिकार के पक्ष में थी लेकिन सुझाया कि इसे मौलिक अधिकारों का अंग नहीं होना चाहिए। इसी के अनुरूप इसे चुनाव सम्बन्धी भाग पंद्रह की धारा 326 में रखा गया। बहरहाल धारा 326 में "सार्वभौमिक" शब्द गायब है। लेकिन चूंकि देश का प्रत्येक बालिग नागरिक मतदान का अधिकारी है इसलिए वस्तुतः यह सार्वभौमिक बालिग मताधिकार हो जाता है। जैसा पहले कहा जा चुका है भारतीयों को सार्वभौमिक बालिग मताधिकार मिलने से पहले भारतीय राष्ट्रीय आंदोलन के प्रमुख नेताओं ने संयुक्त निर्वाचक मंडल के पक्ष में पृथक निर्वाचक मंडल के खात्मे की कोशिश की। हम जानते हैं कि ब्रिटिश लोग 1909 के मोर्ले-मिंटो सुधारों से लेकर 1932 में संविधान में कम्यूनल अवार्ड तक पृथक निर्वाचक मंडल जारी रखना चाहते थे। कम्यूनल अवार्ड में मुस्लिम, यूरोपीय, सिख, भारतीय ईसाई और आंग्ल-भारतीयों के लिए पृथक निर्वाचक मंडल की व्यवस्था थी। इसमें डिप्रेस्ड क्लासेज के लिए भी सीटें थीं जिन्हें विशेष निर्वाचन क्षेत्रों से चुनकर भरा जाना था। इन निर्वाचन क्षेत्रों में केवल डिप्रेस्ड क्लासेज के लोग वोट देते। इसके अलावा डिप्रेस्ड क्लासेज के लोग सामान्य निर्वाचन क्षेत्रों में भी वोट देने के अधिकारी थे। गांधी डिप्रेस्ड

क्लासेज के लिए पृथक निर्वाचक मंडल की धारणा की संस्तुति के विरुद्ध थे। सितंबर 1932 में वे आमरण अनशन पर बैठ गए। अंबेडकर ने गांधी के अनशन का विरोध किया। बहरहाल पूना पैक्ट में गांधी और अंबेडकर दोनों समझौते पर पंहुचे। पूना पैक्ट के मुताबिक सामान्य निर्वाचन क्षेत्रों में डिप्रेस्ड क्लासेज के लिए सीटें आरक्षित की गईं। इससे पृथक निर्वाचक मंडल का खात्मा हुआ। पृथक निर्वाचक मंडल के खात्मे का प्रतिबिंबन संविधान में विधायी निकायों में सीटों के आरक्षण में हुआ।

35.8 सारांश

भारतीय संविधान का निर्माण आमतौर पर दो चरणों में हुआ – 1857 से 1935 तक और 1946 से 1949 तक। कम्पनी से ब्रिटेन की महारानी को जब सत्तांतरण हुआ तो ब्रिटिश सरकार ने विभिन्न ऐक्टों के जरिए प्रशासन के विभिन्न तत्वों को लागू किया। इसी के तहत प्रशासन की संस्थाओं में भारतीयों के प्रतिनिधित्व के तत्व भी शामिल थे। इन्हें लागू करने के पीछे अंग्रेजों का उद्देश्य भारतीयों को लोकतांत्रिक अधिकार देने की जगह औपनिवेशिक हितों की सेवा करना था। 1909 के मार्ले-मिंटो सुधारों और 1932 के कम्यूनल अवार्ड के जरिए सांप्रदायिक प्रतिनिधित्व का प्रावधान किया गया जिसका विरोध भारतीय राष्ट्रीय आंदोलन के नेताओं ने किया खासकर डिप्रेस्ड क्लासेज के मामले में। गांधी के अनशन के परिणामस्वरूप पूना पैक्ट हुआ, जिसके कारण पृथक निर्वाचक मंडल का खात्मा हो गया लेकिन प्रांतीय विधायिका में डिप्रेस्ड क्लासेज को आरक्षण दिया गया। जब कांग्रेस ने अपने देश के निर्वाचकों द्वारा भारत का संविधान बनाने की जरूरत पर जोर दिया तो उसके बाद अंग्रेजों ने भी अनिच्छापूर्वक द्वितीय विश्व युद्ध के बाद बदली हुई राजनीतिक स्थिति में और ब्रिटेन में सरकार के बदलने से महसूस किया कि भारतीयों के लिए भारत की संविधान सभा की तत्काल आवश्यकता है। संविधान सभा की स्थापना कैबिनेट मिशन की संस्तुतियों के अनुपालन में हुई और इसका चुनाव प्रांतीय विधायी सदनों द्वारा सीमित बालिग मताधिकार के जरिए हुआ। समाज के विशेषाधिकारसंपन्न तबकों द्वारा चुने होने के बावजूद संविधान सभा में विभिन्न तरह के अभिमतों और विचारधाराओं का प्रतिनिधित्व हुआ था। इसमें भारत के विभिन्न सामाजिक समूहों का भी प्रतिनिधित्व था। किसी भी निर्णय पर पहुंचने से पहले संविधान सभा सभी मुद्दों पर गहराई से बहस करती थी। संविधान सभा की विभिन्न उप समितियों के निर्णयों और सुझावों को अंततः भारत के संविधान में समाहित कर लिया गया। भारत का संविधान ऐसा दस्तावेज है जो सामाजिक बदलाव का खाका मुहैया कराता है। संविधान सामाजिक जनवाद के कुछ तत्वों के साथ उदार लोकतंत्र और धर्मनिरपेक्षता के सिद्धांतों का मूर्त रूप है। यह व्यक्तियों के अधिकारों – न्याय, स्वतंत्रता, बंधुत्व – की रक्षा की गारंटी देता है और सामाजिक तथा धार्मिक समुदायों के सांस्कृतिक और धार्मिक अधिकारों की भी रक्षा करता है।

35.9 अभ्यास

1) नेहरू रिपोर्ट के प्रावधान क्या थे? इसकी कमियाँ क्या थीं?

2) भारतीय संविधान के निर्माण में संविधान सभा की भूमिका पर विचार कीजिए।

3) भारतीय संविधान के महत्वपूर्ण प्रावधानों पर प्रकाश डालिए।